International Journal of Humanities and Social Science Research
www.socialsciencejournal.in
ISSN: 2455-2070
Received: 26-09-2025, Accepted: 26-10-2025, Published: 10-11-2025
Volume 11, Issue 6, 2025, Page No. 22-25

बौद्ध साहित्य के आलोक में उत्तरापथ एवं दक्षिणापथ: प्राचीन भारतीय वाणिज्य और संस्कृति के वाहक

डॉ. अतुल नारायण सिंह[1], प्रदीप कुमार[2]
[1] असिस्टेंट प्रोफेसर, प्राचीन इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज, उत्तर प्रदेश, भारत
[2] शोध छात्र, प्राचीन इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज, उत्तर प्रदेश, भारत

सारांश
यह शोध पत्र प्राचीन भारत के 'द्वितीय नगरीकरण' काल की दो प्रमुख व्यापारिक धमनियों—उत्तरापथ और दक्षिणापथ—की विवेचना करता है। यह तर्क प्रस्तुत करता है कि पालि त्रिपिटक और जातक कथाओं जैसे बौद्ध साहित्य, इन मार्गों के अध्ययन के लिए प्रमुख प्राथमिक स्रोत हैं, क्योंकि वे ब्राह्मणवादी साहित्य के विपरीत, एक नए शहरी व्यापारी वर्ग ('सेट्ठी' और 'सार्थवाह') के दृष्टिकोण को दर्शाते हैं।
उत्तरापथ को मध्य एशिया (तक्षशिला) से गंगा घाटी होते हुए बंगाल के ताम्रलिप्ति बंदरगाह तक विस्तृत एक महामार्ग के रूप में वर्णित किया गया है। श्रावस्ती , तीन मार्गों के जंक्शन पर स्थित होने के कारण, एक प्रमुख आर्थिक–धार्मिक केंद्र बना, जहाँ बुद्ध ने अपने जीवन के अंतिम 25 'वर्षावास' व्यतीत किए । दक्षिणापथ, श्रावस्ती/वाराणसी से उज्जयिनी होते हुए दक्कन में प्रतिष्ठान तक जाता था, और पश्चिमी तट के बंदरगाहों (जैसे भरुकच्छ) के माध्यम से रोमन व्यापार को जोड़ता था। कौशाम्बी इन दोनों मार्गों के महा–संगम के रूप में महत्वपूर्ण था। जातक कथाएँ इन मार्गों पर व्यापारिक जीवन का सजीव चित्रण करती हैं, जिनमें कारवां के जोखिम (जैसे वण्णुपथ जातक) और 'सुवर्णभूमि' व 'बावेरु' (बेबीलोन) तक की समुद्री यात्राओं का उल्लेख है। पत्र का मुख्य तर्क बौद्ध संघ और व्यापार के बीच एक 'सहजीवी संबंध' को उजागर करना है। 'विनय पिटक' का 'वर्षावास' (मानसून प्रवास) का नियम भिक्षुओं को स्थायी 'विहारों' में रहने के लिए बाध्य करता था। इन विहारों को आर्थिक पोषण के लिए रणनीतिक रूप से व्यापार मार्गों पर स्थापित किया गया। दक्षिणापथ पर अजंता और कार्ले जैसी गुफाएँ इसका प्रत्यक्ष प्रमाण हैं, जो व्यापारियों के लिए सुरक्षित सराय का भी कार्य करती थीं। 'मिलिन्दपञ्ह' इस नेटवर्क का वैश्विक विस्तार 'अलसंद' (अलेक्जेंड्रिया) और चीन तक दिखाता है। अंततः, व्यापार ने संघ को वित्तीय संरक्षण दिया, और संघ ने व्यापार को बुनियादी ढाँचा और वैचारिक वैधता प्रदान की।

मूल शब्दः उत्तरापथ, दक्षिणापथ, सहजीवी, सेट्ठी, सार्थवाह, अनाथपिंडिक, कहापण, कार्षापण

प्रस्तावना

प्राचीन भारत की आर्थिक एवं सांस्कृतिक जीवन–रेखाए

छठी शताब्दी ईसा पूर्व का काल, जिसे प्रायः द्वितीय नगरीकरण की संज्ञा दी जाती है, भारतीय इतिहास का एक युगांतकारी मोड़ था। मध्य–गंगा घाटी में लोहे के प्रयोग से कृषि–अधिशेष, महाजनपदों के रूप में जटिल राजनीतिक संरचनाओं का उदय, और बौद्ध एवं जैन धर्मों के प्रादुर्भाव, ये सभी घटनाएँ एक–दूसरे से गहनता से जुड़ी हुई थी। इस संपूर्ण सामाजिक–आर्थिक और वैचारिक परिवर्तन का मूलाधार एक सुदृढ़ और विस्तृत व्यापारिक नेटवर्क का विकास था। इस नेटवर्क की दो प्रमुख धमनियों के रूप में 'उत्तरापथ' और 'दक्षिणापथ' का उदय हुआ।
उत्तरापथ (Northern High Road), जैसा कि इसके नाम से स्पष्ट है, भारत के उत्तरी भाग को पूर्व से पश्चिम तक जोड़ता था, जो मध्य एशिया से लेकर बंगाल की खाड़ी तक विस्तृत था। इसके विपरीत, दक्षिणापथ (Southern High Road) उत्तर भारत को दक्कन के पठार और दक्षिणी प्रायद्वीप के समुद्री बंदरगाहों से जोड़ता था ।
यह शोध पत्र तर्क प्रस्तुत करता है कि बौद्ध साहित्य—विशेष रूप से पालि त्रिपिटक (विनय, सुत्त एवं अभिधम्म पिटक), जातक कथाएँ और 'मिलिन्दपञ्ह' जैसे उत्तर–कैनोनिकल ग्रंथ—केवल धार्मिक या दार्शनिक संकलन मात्र नहीं हैं। अपितु, वे उस काल के आर्थिक जीवन, विशेषकर इन व्यापारिक मार्गों, के अध्ययन के लिए सर्वाधिक महत्वपूर्ण, समकालीन और विस्तृत प्राथमिक स्रोत हैं। ये ग्रंथ ब्राह्मणवादी साहित्य के विपरीत, जो मुख्यतः कृषि–आधारित और अनुष्ठानिक दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है, एक नए, गतिशील, और शहरी व्यापारी वर्ग के दृष्टिकोण को दर्शाते हैं। यह 'सेट्ठी' (वित्तपोषक) और 'सार्थवाह' (कारवां प्रमुख) का साहित्य है, जो बौद्ध संघ के न केवल प्रमुख आर्थिक संरक्षक थे , बल्कि धर्म–प्रसार के मुख्य वाहक भी बने। इस शोध पत्र में, इन्हीं बौद्ध ग्रंथों के शाब्दिक विश्लेषण के माध्यम से उत्तरापथ और दक्षिणापथ के भौगोलिक विस्तार, आर्थिक महत्व और बौद्ध धर्म के साथ उनके सहजीवी संबंध की विधिवत विवेचना की जाएगी।

उत्तरापथ: साम्राज्य, वाणिज्य और धम्म–प्रसार का महामार्ग

उत्तरापथ प्राचीन भारत का सबसे महत्वपूर्ण और संभवतः सबसे पुराना पूर्व–पश्चिम महामार्ग था। इसका महत्व केवल वाणिज्यिक नहीं, बल्कि सामरिक और सांस्कृतिक भी था।

1. भौगोलिक विस्तार एवं प्रमुख केंद्र

उत्तरापथ का अस्तित्व बुद्ध काल से भी पूर्व का है। महान वैयाकरण पाणिनि (लगभग 5वीं शताब्दी ईसा पूर्व) अपने ग्रंथ 'अष्टाध्यायी' में "उत्तरपथेनाहृतम" का उल्लेख करते हैं, जिसका अर्थ है "वह वस्तु जो उत्तरापथ से लाई गई हो" । यह इस मार्ग की तत्कालीन आर्थिक प्रमुखता को सिद्ध करता है। बौद्ध साहित्य और यूनानी विवरणों के आधार पर इसके मार्ग का पुनर्निर्माण किया जा सकता है:

- **पश्चिमोत्तर सिराः** यह मार्ग मध्य एशिया के 'वाह्लिक' (बल्ख, अफगानिस्तान) से प्रारंभ होता था । हिंदुकुश पर्वतमाला को पार कर यह 'पुष्पलावती' और 'तक्षशिला' (गांधार की राजधानी) पहुँचता था। तक्षशिला न केवल विद्या का एक महान केंद्र था, जहाँ, बौद्ध परंपरा के अनुसार, प्रसिद्ध चिकित्सक जीवक ने अध्ययन किया, बल्कि यह मध्य एशियाई और भारतीय व्यापार का प्रमुख संगम स्थल भी था।

- **मध्य–देशः** तक्षशिला से यह पूर्व की ओर बढ़ता था। 'मूलसर्वास्तिवादिन विनय ' में तक्षशिला से मथुरा तक के मार्ग का वर्णन है, जो 'भद्रंकार' (आधुनिक स्यालकोट) और 'रोहितक' (रोहतक) से होकर गुजरता था । यह मार्ग यमुना

को पार कर गंगा घाटी में प्रवेश करता था और 'हस्तिनापुर', 'मथुरा', 'कान्यकुब्ज' (कन्नौज) और 'कौशाम्बी' जैसे प्रमुख महाजनपद केंद्रों को जोड़ता था।

- **पूर्वी सिरा:** गंगा घाटी में यह मार्ग 'वाराणसी' (काशी), 'पाटलिपुत्र' (मगध की राजधानी) और 'चंपा' (अंग की राजधानी) से होते हुए अपने अंतिम गंतव्य तक पहुँचता था। इसका पूर्वी टर्मिनस बंगाल की खाड़ी पर स्थित महान बंदरगाह 'ताम्रलिप्ति' (आधुनिक तामलुक) था।

मौर्य काल में, चंद्रगुप्त के दरबार में आए यूनानी राजदूत मेगस्थनीज ने इसी उत्तरापथ को "रॉयल रोड" (राजमार्ग) के रूप में वर्णित किया है, जो पश्चिमोत्तर सीमा से पाटलिपुत्र तक विस्तृत था और आठ चरणों में विभाजित था ।

2. श्रावस्ती: उत्तरापथ पर एक आर्थिक–धार्मिक केंद्र

उत्तरापथ पर स्थित नगरों में, बौद्ध साहित्य के दृष्टिकोण से श्रावस्ती (कोसल की राजधानी) का महत्व सर्वोपरि है। बौद्ध ग्रंथों के अनुसार, श्रावस्ती की अपार भौतिक समृद्धि का मुख्य कारण यह था कि यह नगर तीन प्रमुख व्यापारिक मार्गों के संगम (जंक्शन) पर स्थित था । यह न केवल उत्तरापथ पर एक प्रमुख पड़ाव था, बल्कि यहाँ से एक मार्ग दक्षिण (दक्षिणापथ) की ओर प्रतिष्ठान तक और दूसरा मार्ग पूर्वोत्तर की ओर राजगृह की ओर जाता था ।

बौद्ध परंपरा यह उल्लेख करती है कि भगवान बुद्ध ने अपने ज्ञान–प्राप्ति के बाद के जीवन के अंतिम 25 'वर्षावास' श्रावस्ती में ही व्यतीत किए, जो किसी भी अन्य स्थान से अधिक थे। यह कोई संयोग नहीं था, बल्कि एक सुविचारित रणनीतिक निर्णय प्रतीत होता है। श्रावस्ती जैसे प्रमुख व्यापारिक केंद्र को अपना केंद्र बनाने के दो मुख्य लाभ थे:

1. **आर्थिक संरक्षण:** श्रावस्ती धनी 'सेट्ठियों' (महाजनों) और 'सार्थवाहों' का गढ़ था। इन व्यापारियों को, जो अपनी नई अर्जित संपत्ति के लिए सामाजिक प्रतिष्ठा चाहते थे, बौद्ध धर्म में एक आकर्षक विकल्प मिला। उन्होंने संघ को मुक्त हस्त से दान दिया।

2. **धम्म–प्रसार:** उत्तरापथ के जंक्शन पर होने के कारण, श्रावस्ती से बुद्ध के उपदेश (धम्म) इन मार्गों पर यात्रा करने वाले भिक्षुओं, तीर्थयात्रियों और स्वयं व्यापारियों के माध्यम से पूर्व (ताम्रलिप्ति) और पश्चिम (तक्षशिला और मध्य एशिया) तक अत्यंत शीघ्रता से फैल सकते थे ।

श्रावस्ती के 'सेट्ठी' सुदत्त, जिन्हें 'अनाथपिंडिक' (अनाथों को भोजन देने वाला) कहा जाता है, द्वारा राजकुमार जेत से जेतवन विहार के लिए भूमि क्रय करने की कथा इस आर्थिक–धार्मिक गठजोड़ का सबसे ज्वलंत प्रतीक है। यह कथा, जिसमें भूमि को 'कहापण' (स्वर्ण या रजत मुद्राएं) बिछाकर खरीदा गया, स्पष्ट करती है कि कैसे व्यापार से अर्जित "नई" पूंजी को धार्मिक 'पुण्य ' और सामाजिक प्रतिष्ठा में परिवर्तित किया जा रहा था।

दक्षिणापथ: दक्कन और समुद्री व्यापार का गलियारा

यदि उत्तरापथ पूर्व–पश्चिम को जोड़ता था, तो दक्षिणापथ उत्तर भारत के मैदानी इलाकों को दक्कन के पठार और पश्चिमी तट के समृद्ध बंदरगाहों से जोड़ने वाला प्रमुख गलियारा था।

1. भौगोलिक विस्तार एवं प्रमुख केंद्र

दक्षिणापथ का मार्ग उत्तरापथ की तुलना में अधिक चुनौतीपूर्ण था, क्योंकि यह विंध्य पर्वतमाला, घने जंगलों और नर्मदा जैसी बड़ी नदियों को पार करता था। बौद्ध साहित्य और अन्य स्रोतों के आधार पर इसका मार्ग इस प्रकार था:

- **उत्तरी सिरा:** इसका प्रारंभ गंगा घाटी के प्रमुख केंद्रों से होता था। कुछ स्रोत इसका प्रारंभ श्रावस्ती या वाराणसी से मानते हैं।
- **मध्य भारत:** यह मार्ग दक्षिण–पश्चिम की ओर मुड़कर 'विदिशा' (आधुनिक बेसनगर) और 'उज्जयिनी' (अवन्ति की राजधानी) तक पहुँचता था। उज्जयिनी दक्षिणापथ का सबसे महत्वपूर्ण रणनीतिक बिंदु था, जो कई मार्गों का संगम था।

- **दक्कन सिरा:** उज्जयिनी से यह 'माहिष्मती' (नर्मदा तट पर) से होते हुए दक्कन के पठार में 'प्रतिष्ठान' (आधुनिक पैठन, महाराष्ट्र) तक जाता था, जो बाद में सातवाहन साम्राज्य की गौरवशाली राजधानी बना।

2. बंदरगाहों से जुड़ाव और रोमन व्यापार

दक्षिणापथ का वास्तविक आर्थिक महत्व गंगा घाटी को पश्चिमी तट के अंतर्राष्ट्रीय बंदरगाहों से जोड़ने में निहित था। उज्जयिनी और प्रतिष्ठान से "फीडर रूट" या सहायक मार्ग पश्चिम की ओर अरब सागर के तट पर स्थित दो प्रमुख बंदरगाहों तक जाते थे: 'भरुकच्छ' (आधुनिक भड़ौंच, गुजरात) और 'सोपारा' (मुंबई के निकट)।

ये बंदरगाह भारत को रोमन साम्राज्य के साथ होने वाले अत्यंत लाभकारी समुद्री व्यापार से जोड़ते थे। कौटिल्य ने भी अपने 'अर्थशास्त्र' में उत्तरापथ की तुलना में दक्षिणापथ को अधिक महत्व दिया था, क्योंकि उत्तरापथ जहाँ मुख्यतः कंबल, चर्म और घोड़े लाता था, वहीं दक्षिणापथ "शंख, हीरे, मणियाँ, मोती और सोना" जैसी उच्च–मूल्य वाली वस्तुओं तक पहुँच प्रदान करता था। ये वही वस्तुएँ थीं जिनकी रोम में भारी माँग थी।

3. कौशाम्बी: महा–संगम

उत्तरापथ और दक्षिणापथ के इस महा–नेटवर्क में, कौशाम्बी (वत्स महाजनपद की राजधानी) ने एक अद्वितीय स्थान धारण किया। यह नगर यमुना नदी के तट पर ठीक उस बिंदु पर स्थित था, जहाँ पूर्व–पश्चिम का उत्तरापथ और उत्तर–दक्षिण का दक्षिणापथ आकर मिलते थे । इस रणनीतिक अवस्थिति ने इसे प्राचीन भारत का सबसे बड़ा वाणिज्यिक "चौराहा" बना दिया। यह न केवल वस्तुओं, बल्कि विचारों, संस्कृतियों और कला शैलियों का भी एक प्रमुख संगम स्थल बन गया, जैसा कि यहाँ के पुरातात्विक अवशेषों से भी प्रमाणित होता है ।

जातक कथाओं में व्यापारिक जीवन का जीवंत चित्रण

यदि त्रिपिटक इन मार्गों की रूपरेखा और धार्मिक महत्व को स्थापित करते हैं, तो 'सुत्त पिटक' के 'खुद्दक निकाय' में संगृहीत 'जातक कथाएँ' इन मार्गों पर चलने वाले वास्तविक जीवन का एक सजीव और रंगीन चित्र प्रस्तुत करती हैं। ये कथाएँ तत्कालीन व्यापारिक समाज का एक अमूल्य समाजशास्त्रीय और आर्थिक दस्तावेज हैं।

1. 'सार्थवाह' और 'सेट्ठी': व्यापारी वर्ग की भूमिका

बौद्ध साहित्य तत्कालीन व्यापारी वर्ग के दो प्रमुख किरदारों को स्पष्ट रूप से परिभाषित करता है:

- **सेट्ठी:** यह नगर–आधारित, स्थिर पूंजी वाला महाजन, बैंकर और अक्सर व्यापारिक श्रेणियों का प्रमुख ('जेट्ठक' या 'पामुक्ख') होता था। वे संघ के सबसे बड़े वित्तीय समर्थक थे, जैसे श्रावस्ती के अनाथपिंडिक और विशाखा। वे अर्थव्यवस्था के "वित्तपोषक" थे।

- **सार्थवाह:** यह 'सार्थ' (कारवां) का नेता था । जैसा कि डॉ. मोती चंद ने अपनी कालजयी कृति 'सार्थवाह' में विश्लेषण

किया है, सार्थवाह एक साहसी उद्यमी, कुशल प्रबंधक और एक गतिशील नेता होता था, जो सैकड़ों गाड़ियों, व्यापारियों और माल की सुरक्षा के लिए जिम्मेदार होता था ।

जातक कथाओं में 'सार्थवाह' (या बोधिसत्व जो सार्थवाह के रूप में जन्म लेते हैं) को अक्सर नायक के रूप में चित्रित किया गया है । यह चित्रण महत्वपूर्ण है क्योंकि यह व्यापार और वाणिज्य को, जिसे ब्राह्मणवादी व्यवस्था में उतना सम्मान प्राप्त नहीं था, एक नैतिक और वीर पेशे के रूप में स्थापित करता है। बौद्ध धर्म ने इस नए, गतिशील और गैर–भूमि–आधारित व्यापारी वर्ग को वह सामाजिक प्रतिष्ठा और नैतिक ढाँचा प्रदान किया, जिसकी उन्हें आवश्यकता थी।

2. व्यापार की वस्तुएँ एवं परिवहन

जातक कथाएँ इन मार्गों पर व्यापार की जाने वाली वस्तुओं की एक विस्तृत सूची प्रदान करती हैं। इनमें प्रमुख थे:

- **वस्त्र:** काशी का महीन मलमल, रेशम और ऊनी वस्त्र।
- **बहुमूल्य वस्तुएँ:** रत्न, मणियाँ (जैसे मध्य एशिया से लैपिस लाजुली), हाथीदांत, चंदन और सोना ।
- **पशु:** विशेष रूप से उत्तरापथ के माध्यम से मध्य एशिया और सिंध से लाए गए उत्तम नस्ल के घोड़े ।
- **अन्य:** मसाले, शराब, और अनाज। परिवहन के साधनों में, भूमि पर 'सकट' (बैलगाड़ियाँ) के लंबे कारवां और नदियों तथा समुद्र पर 'नाव' (जहाजों) का स्पष्ट उल्लेख है।

3. मार्गों के खतरे और समुद्री यात्राएं

जातक कथाओं को व्यापारिक "जोखिम प्रबंधन" की केस स्टडी के रूप में भी पढ़ा जा सकता है। ये कथाएँ यात्रा के हर चरण में निहित खतरों का सजीव वर्णन करती हैं:

भूमि–मार्ग के खतरे: वण्णुपथ जातक एक कारवां का वर्णन करता है जिसे एक 'वण्णुपथ' (रेत का मार्ग, संभवतः मरुस्थल) पार करना है। जब उनका पानी समाप्त हो जाता है, तब बोधिसत्व (सार्थवाह) एक 'स्थल–नियामक' (थला–निय्यामक) की सलाह पर, जो सितारों को देखकर दिशा ज्ञान करता था, एक चट्टान के नीचे जल–स्रोत खोज निकालते हैं। यह कथा न केवल मरुस्थलीय मार्गों के खतरों को, बल्कि उनसे निपटने के लिए आवश्यक विशेषज्ञ ज्ञान को भी उजागर करती है। मार्गों पर 'पंथघातक' (लुटेरों) का भय भी था।

समुद्री यात्राएं: जातक कथाएँ स्पष्ट रूप से प्रमाणित करती हैं कि बुद्ध काल तक भारतीय व्यापारी लंबी समुद्री यात्राएँ कर रहे थे।

- **बावेरु जातक:** यह भारत और 'बावेरु' (मेसोपोटामिया में बेबीलोन) के बीच समुद्री व्यापार का एक असंदिग्ध संदर्भ प्रदान करता है।
- **महाजनक जातक:** इसमें राजकुमार महाजनक की उत्तरापथ से जुड़े बंदरगाह 'चंपा' (भागलपुर) से 'सुवर्णभूमि' (दक्षिण–पूर्व एशिया) की समुद्री यात्रा का वर्णन है।
- **वलाहस्स जातक:** यह 'ताम्रपर्णी' (श्रीलंका) के तट पर जहाज टूटने की एक भयावह कथा सुनाता है, जहाँ 500 व्यापारी 'यक्षिणियों' के द्वीप पर फँस जाते हैं। यह कथा विदेशी व्यापार में निहित वास्तविक जोखिमों और अज्ञात के भय का एक रूपक है।

बौद्ध संघ, विहार और व्यापारिक मार्ग: एक सहजीवी संबंध

बौद्ध धर्म और इन व्यापारिक मार्गों के बीच का संबंध केवल आकस्मिक नहीं था; यह एक गहरा संरचनात्मक और सहजीवी संबंध था। व्यापार ने बौद्ध धर्म के विस्तार के लिए वित्तीय आधार प्रदान किया, और बौद्ध धर्म ने व्यापार के विस्तार के लिए आवश्यक बुनियादी ढाँचा और वैचारिक समर्थन प्रदान किया।

1. विनय पिटक और 'वर्षावास' का आर्थिक तर्क

इस सहजीवन की नींव 'विनय पिटक' में निहित एक अनुशासनात्मक नियम में पाई जा सकती है। 'विनय पिटक' बौद्ध भिक्षुओं के लिए 'वर्षावास' अर्थात् मानसून के तीन महीनों (आषाढ़ पूर्णिमा से आश्विन पूर्णिमा तक) के दौरान यात्रा को प्रतिबंधित करता है और एक ही स्थान पर निवास को अनिवार्य बनाता है । इस धार्मिक नियम के अप्रत्याशित, किंतु गहन, आर्थिक और भौगोलिक परिणाम हुए:

1. **स्थायित्व की आवश्यकता:** 'वर्षावास' के नियम ने भिक्षुओं की निरंतर घुमंतू (परिव्राजक) जीवन शैली को बाधित किया और उन्हें वर्ष के एक चौथाई हिस्से के लिए स्थायी आश्रयों ('विहार' या 'आवास') में रहने के लिए बाध्य किया।

2. **आर्थिक पोषण की आवश्यकता:** इन स्थायी विहारों के निर्माण और वहाँ रहने वाले भिक्षुओं के दैनिक भरण–पोषण (भोजन, वस्त्र, औषधि) के लिए एक विश्वसनीय और समृद्ध आर्थिक स्रोत की आवश्यकता थी ।

3. **रणनीतिक अवस्थिति:** यह स्थिर आर्थिक स्रोत केवल दो ही स्थानों पर उपलब्ध था: (अ) घनी आबादी वाले समृद्ध नगर, या (ब) उच्च यातायात वाले सक्रिय व्यापारिक मार्ग ।

इस प्रकार, 'विनय पिटक' का 'वर्षावास' संबंधी अनुशासनात्मक नियम, अप्रत्यक्ष रूप से, बौद्ध विहारों की रणनीतिक अवस्थिति के पीछे प्रमुख आर्थिक और भौगोलिक चालक बन गया। बौद्ध मठों को अनिवार्य रूप से वहीं स्थापित होना पड़ा जहाँ धन (अर्थात् व्यापार) केंद्रित था।

2. दक्षिणापथ के गुफा–विहार: पत्थर में सहजीवन

यह सहजीवी संबंध दक्षिणापथ पर सबसे स्पष्ट और स्थायी रूप में दिखाई देता है। दक्कन में, सातवाहन काल के दौरान, भरुकच्छ और सोपारा के बंदरगाहों के माध्यम से रोमन साम्राज्य के साथ व्यापार से अपार धन अर्जित किया गया। इस नव–अर्जित धन का एक बड़ा हिस्सा व्यापारी श्रेणियों (Guilds) और 'सेट्ठियों' द्वारा बौद्ध संघ को दान कर दिया गया।

इस धन का उपयोग दक्षिणापथ के प्रमुख व्यापारिक दर्रों (जैसे नानेघाट और भोरघाट) पर, जो दक्कन के पठार को तट से जोड़ते थे, विशाल और भव्य चैत्य–गृहों और विहारों के निर्माण के लिए किया गया। अजंता, कार्ले, भाजा, बेडसा और नासिक की प्रसिद्ध गुफाएँ इसी व्यापार–पोषित संरक्षण का परिणाम हैं।

इन गुफा–परिसरों की अवस्थिति उनके दोहरे उद्देश्य को दर्शाती है:

1. **भिक्षुओं के लिए:** ये मानसून के दौरान 'वर्षावास' के लिए आदर्श, शांत और स्थायी आश्रय थे।
2. **व्यापारियों के लिए:** चूँकि ये ठीक व्यापार मार्ग पर स्थित थे, ये व्यापारियों और उनके कारवां के लिए मानसून की बारिश से बचने, विश्राम करने के लिए सुरक्षित सराय, और संभवतः उनके मूल्यवान माल के लिए गोदाम या सुरक्षित खजाने के रूप में भी कार्य करते थे।

3. आर्थिक प्रणाली: 'कहापण' (कार्षापण)

बौद्ध साहित्य एक पूर्णतः मुद्रीकृत अर्थव्यवस्था को दर्शाता है, जो इस व्यापारिक तंत्र के लिए आवश्यक थी। 'कहापण' या 'कार्षापण' (आहत–चिह्नित रजत या ताम्र मुद्रा) का उल्लेख विनय पिटक में भिक्षुओं द्वारा किए जाने वाले छोटे–मोटे लेन–देन के संदर्भ में और जातक कथाओं में बड़े व्यापारिक भुगतानों के लिए बार–बार आता है ।

जेतवन विहार की खरीद की कथा, जिसमें अनाथपिंडिक ने भूमि को 'कहापण' बिछाकर खरीदा, यह सिद्ध करती है कि बौद्ध संघ

का पोषण केवल वस्तु–विनिमय या भिक्षा पर नहीं, बल्कि बड़े पैमाने पर नकद दान पर निर्भर था, जो सीधे तौर पर इन व्यापारिक मार्गों से उत्पन्न हो रहा था।

मिलिन्दपञ्ह में व्यापारिक क्षितिज का विस्तार

यदि जातक कथाएँ बुद्ध काल के व्यापार का चित्रण करती हैं, तो उत्तर–मौर्य काल का प्रसिद्ध बौद्ध ग्रंथ 'मिलिन्दपञ्ह' (लगभग 100 ईसा पूर्व – 200 ईस्वी) इस व्यापारिक नेटवर्क के वैश्विक विस्तार का एक अमूल्य साक्ष्य प्रस्तुत करता है। यह ग्रंथ इंडो–यूनानी राजा मिलिन्द (मेनांडर) और बौद्ध भिक्षु नागसेन के बीच एक दार्शनिक संवाद है।

1. वैश्विक समुद्री व्यापार का मानचित्र

एक दार्शनिक प्रश्न के उत्तर में, भिक्षु नागसेन एक धनी 'नाविक' (जहाज के मालिक) का उदाहरण देते हैं, जो बंदरगाह करों का भुगतान करके अपने जहाज पर समुद्र की यात्रा करता है। नागसेन उन बंदरगाहों की एक सूची गिनाते हैं जहाँ वह जा सकता है। यह सूची तत्कालीन बौद्ध दुनिया के ज्ञात भौगोलिक क्षितिज को दर्शाती है:

- वंग (बंगाल, ताम्रलिप्ति से जुड़ा)
- तक्कोल (मलय प्रायद्वीप)
- चीन
- सोवीर (सिंधु डेल्टा का बंदरगाह)
- सूरत (गुजरात)
- अलसंद (मिस्र में अलेक्जेंड्रिया)
- कोलपट्टन (कोरोमंडल तट)
- सुवर्णभूमि (दक्षिण–पूर्व एशिया)

यह सूची आश्चर्यजनक रूप से स्पष्ट है। यह उत्तरापथ के पूर्वी सिरे (वंग) और दक्षिणापथ के पश्चिमी सिरे (सोवीर, सूरत) को पश्चिम में रोमन साम्राज्य के हृदय (अलसंद/अलेक्जेंड्रिया) और पूर्व में चीन के साथ जोड़ने वाले एक एकीकृत वैश्विक समुद्री नेटवर्क की स्पष्ट बौद्ध जागरूकता को प्रमाणित करती है।

उपसंहार: प्राचीन भारत के एकीकरण में मार्गों की भूमिका

बौद्ध साहित्य के साक्ष्यों का समग्र विश्लेषण यह स्पष्ट करता है कि उत्तरापथ और दक्षिणापथ केवल व्यापारिक मार्ग नहीं थे; वे प्राचीन भारत के एकीकरण की धमनियां थे। वे आर्थिक समृद्धि के वाहक थे, जिसने द्वितीय नगरीकरण को संभव बनाया। वे बौद्ध धर्म के अखिल भारतीय और अंतर्राष्ट्रीय प्रसार (मध्य एशिया, श्रीलंका, चीन और दक्षिण–पूर्व एशिया तक) के प्रमुख माध्यम थे। और वे सांस्कृतिक आदान–प्रदान के गलियारे थे, जिसने उदाहरण के लिए, उत्तरापथ के माध्यम से गांधार कला जैसी संकर शैलियों को जन्म दिया ।

अंततः, यह विवेचना एक गहरे सहजीवी संबंध को उजागर करती है। बौद्ध संघ और व्यापारी वर्ग (सेट्ठी और सार्थवाह) एक–दूसरे पर निर्भर थे। व्यापार ने संघ को वह आर्थिक संरक्षण प्रदान किया जिसकी उसे अपने भरण–पोषण और विस्तार के लिए आवश्यकता थी । इसके बदले में, संघ ने व्यापार को दो अमूल्य संपत्तियाँ प्रदान कीं: पहला, इन खतरनाक मार्गों पर विहारों के रूप में एक विश्वसनीय भौतिक बुनियादी ढाँचा, जो सुरक्षित सराय और विश्राम गृह के रूप में कार्य करता था ; और दूसरा, एक वैचारिक वैधता, जिसने धनार्जन और वाणिज्य को एक अनुष्ठानिक रूप से हीन गतिविधि के बजाय एक नैतिक और पुण्यपूर्ण उद्यम के रूप में प्रतिष्ठित किया। इस प्रकार, धम्म और वाणिज्य ने इन प्राचीन महामार्गों पर साथ–साथ यात्रा की।

संदर्भ ग्रंथ

1. चंद, मोती (1953). सार्थवाह। पटना: बिहार राष्ट्रभाषा परिषद्।
2. Chandra, Moti (1977). Trade and Trade Routes in Ancient India. नई दिल्ली: अभिनव पब्लिकेशन्स। (यह 'सार्थवाह' का अंग्रेजी संस्करण है)।
3. थापर, रोमिला (1966). । History of India, Volume One. लंदन: पेंगुइन बुक्स।
4. Thapar, Romila (2002). Early India: From the Origins to AD 1300. बर्कले: यूनिवर्सिटी ऑफ कैलिफोर्निया प्रेस।
5. Thapar, Romila (1961). Asoka and the Decline of the Mauryas. ऑक्सफोर्ड: ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
6. लाहिरी, नयनजोत (1992). The Archaeology of Indian Trade Routes up to c. 200 BC: Resource Use. Resource Access and Lines of Communication. दिल्ली; न्यूयॉर्क: ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
7. Rhys Davids, T.W. (1903). Buddhist India. लंदन: T-Fisher Unwin।
8. Fick, Richard (1920). The Social Organisation in North-East India in Buddha's Time. (अनुवादित एस. के. मैत्रा) कलकत्ता: यूनिवर्सिटी ऑफ कलकत्ता।
9. Bose, A.N. (1942-1945). Social and Rural Economy of Northern India, c. 600 B.C. to 200 A.D. 2 खंड। कलकत्ता: यूनिवर्सिटी ऑफ कलकत्ता।
10. ट्रेंकनर, वी. (सं.) (1880). The Milindapañho. लंदन: विलियम्स एंड नोरगेट।
11. रीस डेविड्स, टी. डब्ल्यू. (अनु.) (1890–1894). The Questions of King Milind. 2 खंड। ऑक्सफोर्ड: क्लेरेंडन प्रेस।
12. कॉवेल, ई. बी. (सं.) (1895-1907). The Jātaka or Stories of the Buddha's Former Birth. 6 खंड। कैम्ब्रिज: कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस।
13. कौसल्यायन, भदंत आनंद (अनु.) (1941-1943). जातक अट्ठकथा (हिन्दी अनुवाद)। 6 खंड। प्रयाग: हिन्दी साहित्य सम्मेलन।